क्या निर्धनता एक अभिशाप है ?

जीवन कोई खेल नहीं है और न ही यह जगत् मनोरञ्जन के लिए क्रीड़ास्थल है। वह एक कसौटी है जिस पर खरा उतरना एक कठिन कार्य है। इसमें सुख है तो दु:ख भी है, न्याय है तो अन्याय भी है, पुण्य है तो पाप भी है और सम्पन्नता है तो विपन्नता भी है। इन व ऐसे ही अन्य द्वन्द्वों से जूझना और उसके परे जाना जीवन का महान् आदर्श है। इनके अभाव से जीवन नीरस और ऊब उत्पन्न करनेवाला हो जायेगा। इस दृष्टिकोण से निर्धनता एक अभिशाप है या जीवन की एक आवश्यकता, इस पर विचार करना उचित होगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि धन-सम्पत्ति की लालसा मनुष्य मात्र में आदिकाल से है, परन्तु आरम्भ में जिस सम्पत्ति को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए साधन के रूप में अपनाया गया था, कालान्तर में वह साध्य बन गई। धनिक होना प्रतिष्ठा का सूचक और अपने-आप में एक गुण बन गया। जैसे-जैसे कुछ लोग अधिक धनी होते गए, वैसे-वैसे अधिकांश लोग निर्धन होते गए। यह अन्तर, सम्पन्नता और विपन्नता की यह खाई इतनी चौड़ी हो गई कि उसे पाटना प्राय: असम्भव-सा लगने लगा। निर्धनता को सीमित करने अर्थात् सभी के लिए अन्न-वस्त्र उपलब्ध कराने के जितने प्रयत्न किये गए, वे असफल ही हुए। अतएव कुछ लोगों ने निर्धनता को अभिशाप समझकर उसे निर्मूल करने की घोषणा की; गरीबी मिटाने के संकल्प दोहराये गए। यह समझा जाने लगा कि यदि सभी लोग धनी और सम्पन्न हो जायेंगे तो जीवन में सुख, सन्तोष और आनन्द का सञ्चार हो जायगा, कोई भी मनुष्य दु:खी नहीं रहेगा। इस दृष्टिकोण में सत्यता का अंश कितना है, इसका विचार करने के पश्चात् ही यह निर्णय हो सकता है कि निर्धनता वास्तव में अभिशाप है या नहीं। इस प्रसंग में एक रोचक तथ्य यह है कि 'गरीबी हटाओ 'का नारा सम्पन्न और सत्ता-प्राप्त लोगों द्वारा ही प्रचारित और प्रसारित किया जाता है। कहा जाता है कि अमेरिका जैसे सम्पन्न देश में यह पाया जाता है कि 'या तो धनी बनो या फिर मिट जाओ' अर्थात् निर्धन लोगों को जीवित रहने का अधिकार नहीं है। निर्धनता के प्रति ऐसा कठोर दृष्टिकोण वैभव से उत्पन्न अहंमन्यता के अतिरिक्त और क्या हो सकता है ? गरीबी नहीं मिटती है तो गरीबों को ही मिटा दो, गरीबी स्वत: ही मर जायगी !

निर्धनता के क्लेशकारी पक्ष पर कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं है, वह सर्वविदित है और कुछ अंशों तक सर्वअनुभूत भी है। देखना यह है कि क्या निर्धनता का कोई उज्ज्वल पक्ष भी है ? क्या वह किसी न किसी रूप में मानवता के लिए उपयोगी सिद्ध होती है या हो सकती है ? गरीबी पूर्णतया मिटायी जा सकती है, यह बात भी अपने-आप में सन्देहास्पद है। परन्तु, एक क्षण के लिए यह मान भी लिया जाय कि निर्धनता को निर्मूल किया जा सकता है, तब भी यह प्रश्न प्रासंगिक होगा कि क्या ऐसा करना उचित होगा ? निस्सन्देह प्रत्येक मनुष्य के लिए उदर-भरण की व्यवस्था, अङ्ग को ढँकने की व्यवस्था और जीवन-धारण के लिए आवश्यक अन्य वस्तुओं की पूर्ति

होनी ही चाहिए तथा इनकी प्राप्ति के लिए ही अधिकान्श लोग कर्मप्रवृत्त होते हैं, संघर्षरत होते हैं और इस प्रकार अपनी शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों का प्रयोग करते हैं। यदि ये आवश्यकताएँ अनायास ही प्राप्त होती रहें तो मनुष्य के निष्क्रिय और अकर्मण्य हो जाने की सम्भावना ही अधिक रहेगी। श्रीमन्त लोगों के छोटे-मोटे कार्य करने के लिए सेवक, प्रवास करने के लिए वाहन आदि की उपलब्धि उन्हें शारीरिक कर्मों की उपेक्षा की ओर प्रवृत्त करती है और फलस्वरूप वे नाना रोगों से ग्रसित होते जाते हैं। **शारीरिक श्रम की महत्ता कम नहीं आँकी जानी चाहिए।**

इसी प्रकार जीवन में संघर्ष अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मनुष्यमात्र में कुछ गुप्त शक्तियाँ विद्यमान रहती हैं और संघर्ष उन गुप्त शक्तियों को प्रकट करने का महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। निर्धनता से उत्पन्न जीवन संघर्ष व्यक्ति में साहसपूर्वक कठिनाइयों से जूझने, धैर्य से विपत्तियों का सामना करने और आत्मविश्वास से प्रगति के मार्ग पर अविचल भाव से अग्रसर होने का अवसर प्रदान करता है। यदि हम महापुरुषों के जीवन-चरित्र का अध्ययन करेंगे तो जो आश्चर्यजनक तथ्य सामने आयेगा वह यह कि उनमें से अधिकांश निर्धनता की पीड़ा, अभावों का दंश तथा उपेक्षा और तिरस्कार की प्रताड़ना सहन करने की महानता के उच्च शिखर तक पहुँच सके थे। कर्नाटक के एक महान् साक्षात्कारी सन्त, **श्री अम्बुराव महाराज** को इमली के पत्ते या नमक के साथ कच्चे बैंगन खाकर कुछ समय बिताना पड़ा, उनके शिष्य **दाते महाराज** को बचपन में चाहे अत्यल्पकाल के लिए ही क्यों न हो, भिक्षा पर निर्भर रहना पड़ा था, **स्वामी विवेकानन्द** को इसी प्रकार भूख की ज्वाला और निर्धनता से उत्पन्न आत्मलोड़न की क्लेशकारी परिस्थितियों से गुजरना पड़ा था और तभी वे सब जगद्वन्द्य बन सके थे। हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला न जाने कितने समय तक भूखे और नंगे बदन रहने को बाध्य हो जाते थे, प्रसिद्ध उपन्यासकार **प्रेमचन्द** आजीविका की खोज में न जाने कहाँ-कहाँ भटके थे, भारत के प्रसिद्ध गणितज्ञ रामानुजम् को 'क्लर्क' का काम करना पड़ा था, **टॉमस एडिसन** जैसे प्रख्यात आविष्कारक को समाचारपत्र बेचकर उदरपूर्ति करनी पड़ी। सारांश यह कि शायद ही ऐसा कोई महान् वैज्ञानिक, दार्शनिक, साहित्यकार या ईश्वरभक्त सन्त होगा जिसने निर्धनता से उत्पन्न वेदना को साहसपूर्वक सहन नहीं किया हो। वास्तविकता तो यह हैं कि अभावों से जूझने तथा निर्धनता में भी मस्त रहनेवाले ये दृढ़प्रतिज्ञ और साहसी महापुरुष ही जगत् को नयी दिशा देने में सफल हुए हैं। **जीवन में महानता का सञ्चार करने और मानवोचित गुणों के पोषण करने के महत्त्वपूर्ण कार्य में निर्धनता का योगदान कम नहीं है।**

यह सामान्य अनुभव की बात है कि जहाँ गरीबों में मैत्री, सहयोग और परस्पर एक दूसरे की सहायता करने की प्रवृत्ति पायी जाती है, वहीं धनी लोग एक दूसरे से ईर्ष्या और द्वेष को हृदय में छिपाये औपचारिक सभ्यता का प्रदर्शन करते देखे जाते हैं। भूखे की पीड़ा को समझकर निर्धन के मन में जो सहानुभूति जागृत होती है और वह जिस तत्परता से उसकी सहायता करता है, वह किसी भी सम्पन्न व्यक्ति में मिलना एक अपवाद मात्र होगा। यदि धनी व्यक्ति कभी किसी निर्धन की कुछ सहायता करता भी है तो उसमें या तो तिरस्कार और दया का भाव होगा या उपहास और प्रताड़ना परिलक्षित होगी। प्रेम और सहानुभूति के लिए शायद ही उसके हृदय में कोई स्थान होगा, परन्तु इसके ठीक विपरीत निर्धन व्यक्ति सड़क पर घूमते कुत्तों तक के लिए प्रेम और अपनत्व प्रकट करने में नहीं हिचकिचाता। एक निर्धन के परिवार में जो सहयोग, सद्भावना और सहनशीलता का दर्शन होता है, उसका मूल्य उस धनी के घर से कहीं अधिक है जिसमें वैभव-

विलास के प्राचुर्य के साथ-साथ परिवार के सदस्यों की एक दूसरे के प्रति उपेक्षा, उदासीनता और अहंकारपूर्ण व्यवहार देखने को मिलता है। एक के घर में सुख और शान्ति है, दूसरे के घर में सुख का दिखावा और शान्ति का प्रदर्शनमात्र; एक का जीवन सहृदयतापूर्ण एवं संवेदनायुक्त है तो दूसरे का हृदयहीनता और संवेदनशून्यता,को छिपाने के प्रयत्नों का भौंडा प्रदर्शन। आज की सभ्यता की इस औपचारिकता ने, प्रदर्शन की इस भयावह प्रवृत्ति ने मानव जीवन को कितना असहज और विकृत कर दिया है। इसका प्रमाण निरन्तर वृद्धिगत होते हुए मानसिक रोग, जीवन की नीरसता और उसको भरने के लिए किये गए निम्न कोटि के मनोरञ्जन के साधन पर्याप्त हैं। क्या इस दृष्टि से निष्कपट, सहज और सरल हृदय को प्रोत्साहन देनेवाली निर्धनता श्रेयस्कर नहीं है ? इसी दृष्टिकोण से प्राध्यापक विनायक हरिदाते ने अपनी पुस्तक Prof. R.D. Ranade and his spiritrual lineage में एक स्थान पर लिखा है– Where There are Wealth and prosperity one is likely to invite some attendant evil also and where there are poverty and contentment, one may be accomplished with the virtuous life. - (page 147)

निर्धनता कोई नहीं चाहता, परन्तु जब वह आ ही जाती है, तब उसे झूठे आश्वासनों से फुसलाने का प्रयत्न करना अधिक हानिकारक होता है। उसका एक दुष्परिणाम तो यह होता है कि उन गरीब लोगों के मन में एक झूठी आशा जागृत होती है जो एक ओर तो उनके सन्तुष्ट जीवन में असन्तोष की ज्वाला धधकाती है और दूसरी ओर गरीबी से जूझने की दृढ़ता में शिथिलता लाती है। गरीबी कैसे दूर होगी, यह वे न तो जानते हैं और न उन्हें बताया जाता है। फिर झूठे आश्वासनमूलक मृग-मरीचिका का नशा इतना उन्मादक हो जाता है कि जब यह आशा छलावा सिद्ध होती है, तब स्थिति विस्फोटक बन जाती है। उनके अपने जीवन में और सामाजिक परिवेश में आक्रोश, उन्माद और अशान्ति का प्रदर्शन प्रारम्भ हो जाता है।

इसके विपरीत यदि मृत्यु की भाँति निर्धनता को भी अटल मान कर यह विश्वास किया जावे कि परमेश्वर की सृष्टि में शुभ और अशुभ दोनों का स्थान है, दोनों का प्रयोजन है और सम्भवतया दोनों का उपयोग है, तो मृत्यु की तरह निर्धनता को भी स्वीकार किया जा सकता है। जैसे मृत्यु अटल है, परन्तु मृत्यु का भय मिटाया जा सकता है और दीर्घायु होने के प्रयत्न किये जा सकते हैं, ठीक उसी प्रकार निर्धनता यदि मिटायी नहीं जा सकती तो उसकी पीड़ा की अनुभूति पर विजय प्राप्त की जा सकती है और साथ-साथ यथाशक्ति अन्न-वस्त्रादि आवश्यक वस्तुओं को सरलता से उपलब्ध कराने की व्यवस्था भी की जा सकती है। विलासिता के प्रदर्शन की वस्तुओं के अभाव से दुःखी न होने की धारणा को दृढ़ किया जा सकता है। इसी प्रसङ्ग में श्री अम्बुराव महाराज कहा करते कि श्रीमन्त भी दो रोटी खाता है और निर्धन भी दो ही रोटी खाता है। श्रीमन्त लोगों को आनन्द इस कल्पना से होता है कि उनके पास खूब पैसा है, परन्तु वह सब पैसे का उपयोग अपने सुखोपभोग के लिए करता नहीं। 'मेरे पास पैसा नहीं है, ऐसी कल्पना से गरीब दुःखी होता है, परन्तु वे दोनों ही यह भूल जाते हैं कि उनके सुख या दुःख का कारण सम्पन्नता या विपन्नता न होकर वह कल्पना है जो एक में अहंकार को उत्पन्न करती है तो दूसरे में निराशा को जन्म देती है। इस कल्पना का नाश यदि हो सके तो निर्धनता का दंश पीड़ादायक नहीं होगा। इसके अतिरिक्त यह भी समझ में आ जायगा कि यदि किसी को मिटाना ही है तो विलासिता को मिटाना उचित होगा न कि मानवोचित गुणों का पोषण और प्रसारण करनेवाली निर्धनता को।

- जगन्नाथ व्यास
वरिष्ठ अध्यापक (से.नि.)
भजन चौकी, जोधपुर